मीराबाई-एक ऐसी नदी जो बांधी न जा सकी

कमला भसीन

नारीवाद और नारीवादी बहुत बदनाम हैं। इसमें हैरान होने की भी कोई बात नहीं है, क्योंकि औरतों की आज़ादी की बात बहुत कम लोगों के गले उतरती है। औरत की आज़ादी की बात होती है तो लोगों को समाज, संस्कृति, धर्म, परिवार सबकी नींव हिलती सी लगती है। परिवार के मुखियाओं को अपना राज सिंहासन हाथ से जाता नज़र आता है।

कई बार जिस औरत को नारीवादी कहकर तोहमत लगाई जाती है, उस बेचारी ने नारीवाद का नाम भी नहीं सुना होता। एक औरत का कहना है कि जब भी वह पायदान बनने से इन्कार करती है उसे नारीवादी कहा जाता है। मेरा मानना है कि हम औरतों के अधिकारों की बात करने वालों को कोई भी नाम दे दें, वो बदनाम होंगे, क्योंकि लोगों को परेशानी है औरतों की आज़ादी से। औरतों की स्वायत्तता, उनका स्वराज रास नहीं आता। औरत जगमानी, पति, पिता, बेटा मानी की जगह मनमानी करे ये कम लोगों को अच्छा लगता है।

अक्सर नारीवादियों पर सबसे बड़ी तोहमत लगाई जाती है कि नारीवाद एक विदेशी विचारधारा है, यह पश्चिमी देशों से लाई गई सोच है। नारीवाद में लोगों को 'फॉरन हैन्ड' (विदेशी षड़यंत्र) दिखाई देता है और लोग 'स्वदेशी' की दुहाई देकर नारीवादी सोच को बुरा भला कहते हैं। मज़े की बात यह है कि नारीवाद को 'पाश्चात्य की देन' कहकर उसे बेकार बताने वाले अक्सर वे लोग होते हैं जो स्वयं पतलून-शर्ट पहने होते हैं, अंग्रेज़ी भाषा में बोलते हैं। वे कई विदेशी दर्शकों के भक्त होते हैं।

क्या मीरा नारीवादी नहीं थीं?

मेरा अपना मानना यह है कि नारीवादी सोच कहीं बाहर से नहीं आई। मेरी नज़र में हर सदी में भारत में नारीवादी सोच की औरतें हुई हैं- और उन्होंने किसी अमरीकी नारीवादी का न नाम सुना था, न किताब पढ़ी थी। अब मीराबाई को ही लें। मेरा मानना है कि आज से 480 बरस पहले राजस्थान जैसे मर्दाने, पितृसत्तात्मक इलाके में पैदा हुई मीराबाई अवश्य एक नारीवादी थी। मीरा ने नारीवाद का नाम भी नहीं सुना

था। न कोई पर्चा पढ़ा था, न किसी मोर्चे में भाग लिया था, न किसी महिला समूह की सदस्य थी मीरा। वह तो एक नदी थी जो सामाजिक बांधों में बंधकर न रह सकी। औरतों पर लगाये गये बंधनों में जीने को तैयार न हुई मीरा और बह निकली। अपने मन की करने को मीरा ने अपना सब कुछ दांव पर लगा दिया। उस 13-14 बरस की मीरा का मन ही आजाद था, उसके अंदर से फूट रहे थे झरने आज़ादी के। पितृसत्ता के ख़िलाफ़, औरतों पर लगाये बंधनों के ख़िलाफ़, अंदर से निकलने वाला लावा ही नारीवाद है। यह कोई ऊपर से थोपा पहनावा नहीं है।

मीरा ने नारीवाद का नाम भी नहीं सुना था। न कोई पर्चा पढ़ा था, न किसी मोर्चे में भाग लिया था, न किसी महिला समूह की सदस्य थी मीरा। वह तो एक नदी थी जो सामाजिक बांधों में बंधकर न रह सकी। औरतों पर लगाये गये बंधनों में जीने को तैयार न हुई मीरा और वह निकली।

जैसा राजस्थान में होता था और आज भी होता है—मीरा की छोटी सी उम्र में शादी तय कर दी गई। अच्छे घर की लड़कियों को भी पढ़ाने लिखाने, कोई हुनर सिखाने की बात थी कहां तब। राणा परिवार के राजकुमार से मीरा की शादी तय कर दी गई, लेकिन मीरा ने तो कृष्ण को अपना पति पहले से ही मान लिया था। वह कोई और शादी नहीं करना चाहती थी। कहते हैं- मीरा ने बहुत मना किया शादी करने से, पर कहां मानने वाला था परिवार एक बच्ची की ऐसी अनसुनी मांग। शादी हुई और 13-14 साल की मीरा अपनी हम उम्र दासी और सहेली ललिता और अपने जीवन साथी कृष्ण की मूर्ति लेकर ससुराल पहुंची। कैसी छटपटाती होंगी ये नन्हीं सी जानें जिनकी ज़बरदस्ती शादी कर दी जाती हैं, जिन्हें बिल्कुल अनजाने घरों में हमेशा के लिये भेज दिया जाता है, अंदाज़ा लगाना मुश्किल है।

ख़ैर-हर असहाय, अस्वायत्त लड़की की तरह मीरा ससुराल पहुंची। वहां सासूजी ने देवी की पूजा करने को कहा तो आज़ाद मन की मीरा ने कहा वह तो कृष्ण की भक्त है, किसी और की पूजा कैसे कर सकती है। पूरा ससुराल परेशान हो गया होगा उस दिन। राणाओं के घर में अपनी मर्ज़ी का मालिक एक और कहां से आ गया और वह भी घर की बहू। घरवालों के दबाव की वजह से मीरा का शरीर ससुराल ज़रूर पहुंच गया था, पर उसका मन अपने पति को नहीं स्वीकार सका और लड़कियों की तरह मीरा अपने मन के ख़िलाफ़ कुछ करने को तैयार न थी।

एक परम्परा के खिलाफ़ मीरा का विरोध

कुछ बरसों के बाद मीरा के पति की मौत हो गई- यानि छोटी सी उम्र की मीरा विधवा हो गई। वहां की रीति के हिसाब से मीरा को अपने पति की मौत के बाद न जीने की ज़रूरत थी न जीने का अधिकार। उसे सती होने को मजबूर किया गया। अंदाजा लगायें क्या हालत रही होगी मीरा की। 20-22 साल की मीरा एक तरफ़ और सारा समाज एक तरफ़। मीरा ने कहा कैसी सती? क्यों सती? मेरा पति कृष्ण है और उसका देहान्त नहीं हुआ है तो मैं भला कैसे विधवा हुई? यह सोचकर भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं कि अगर मीरा अड़ी न होती तो वह ज़िन्दा जला दी जाती। वह हज़ारों गीत जो मीरा ने बनाये-न

बनते, न गाये जाते, वह रास्ते जो मीरा ने बनाये, जिन से पांच सौ बरस बाद भी हम जैसे लोग उत्साहित होते हैं, न बनते। राजस्थान की हज़ारों, लाखों बेटियों, बहुओं जिनको ज़िन्दा जला दिया जाता है, या जिनको पैदा होते ही मार दिया जाता है– उनमें से एक होती मीरा। न जाने कितनी मीराओं की बलि चढ़ाई गई है पितृसत्ता पर। न जाने कितनी और मीरा जैसी ही होनहार बच्चियों को सोचने, लिखने, गाने से वंचित रखा है पितृसत्ता ने।

पितृसत्ता के ख़िलाफ़ मीरा की लड़ाई

अपने तरीक़े से मीरा ने विवाह जैसी संस्था का विरोध किया, बहुओं पर ससुराल की हर बात थोपे जाने का विरोध किया और भाग्यवश सफल हुई। मीरा की आस्था, उसका विश्वास इतना अटल रहा कि वह अपने रास्ते से नहीं हटी।

अगर ग़ौर करें और देखें कि मीरा ऐसा क्या चाहती थी जो ग़लत था। वह सिर्फ़ अपनी मर्ज़ी से जीना चाहती थी-उसके अंदर जो लगन थी उसे पूरा करना चाहती थी। वह लगन थी परमात्मा के प्यार की, वह लगन थी आध्यात्म की। साधू संगत की लगन थी, परमात्मा के प्रेम में नाचने की लगन थी, कृष्ण की याद में गीत लिखने की लगन थी। मीरा यह मानने को तैयार नहीं थी कि चूंकि वह लड़की है—उसे यह सब करने का अधिकार नहीं है। यह लड़के-लड़की का भेद, स्त्री-पुरूष की ग़ैरबराबरी मीरा को क़बूल नहीं थी। 15-16 साल की उम्र से ही मीरा ने इस अन्याय को चुनौती दी।

मीरा की लगन में इतनी चमक रही होगी कि उसके परिवार वाले उसे रोक न सके। मीरा ने साधुओं, ज्ञानियों के साथ उठना-बैठना शुरू किया। सुन्दर कपड़ों और गहनों की जगह मीरा को भक्ति से प्यार था। सुनारों से मिलने की जगह उसे साधुओं, फ़क़ीरों से मिलना अच्छा लगता था। एक विधवा औरत पराये मर्दों से मिले यह भला राणाओं को कैसे अच्छा लगता। मीरा के ससुर, जेठ आदि ने कभी धमकी देकर मीरा को रोकने की कोशिश की, कभी बदनाम करके। लोग कह रहे थे 'पागल है यह औरत, सिरफिरी है, अपने इज्ज़तदार परिवार का नाश कर रही है'। तब घूंघट और चारदीवारी के अंधेरों में सिमटकर रहने वाली औरतें इज्ज़तवाली कहलाती थीं। खुला आसमान और रोशनी चाहने वाली औरत कुलनाशी मानी जाती थी। मीरा जानती थी यह सब और उसने कहा–

'पग घूंघरू बांध मीरा नाची रे'। लोग कहें
मीरा भई रे बावरी, सास कहे कुलनासी रे'–

उस औरत विरोधी समाज से मीरा को लाज नहीं थी। वह निकल पड़ी।

अंदाज़ा लगायें, पांच सौ साल पहले के राजस्थान का, जहां पर्दे के बिना 'ऊंचे' घरों की औरतें बाहर नहीं निकलती थीं, वहां पर राणाओं के घर की विधवा बहू गलियों में घूमती, मर्दों के साथ उठती बैठती, कृष्ण प्रेम में मगन गाती, नाचती। आज 1997 में भी मीरा जैसी औरत ढूंढना आसान न होगा जिसमें सामाजिक बंधन, रूढ़ि तोड़ने की हिम्मत हो, जिसमें इतनी अन्दरूनी शक्ति हो कि वह हर रुकावट का हंसते हुए मुकाबला करे।

'विष का प्याला राणाजी ने भेजा,
पीवत मीरा हांसी रे'
मीरा ने अपने ससुराल वालों से कहा–
'राणाजी अब न रहूंगी तोरे हठ की साध्
संग मोहे प्यारा लागे लाज गई घूंघट की'

राह के हर पत्थर को सीढ़ी बनाया

पितृसत्ता और सामन्ती राज को ऐसी चोट मारी मीरा ने कि आज तक भी उसकी रोशनी फैली है। अगर मीरा जैसी लगन, उस जैसी फ़कीरी, निडरता हो तो एक अकेली औरत पितृसत्ता के गढ़ में पैदा होकर भी उस पर धावा बोल सकती है। कितनी औरतों के दिलों को गर्माया होगा मीरा की हिम्मत ने। मीरा ने साबित कर दिया कि औरत भी भक्त हो सकती है, भक्ति में मस्त हो गीत बना सकती है, अपनी लगन और आस्था के दम पर ऐसी शोहरत पा सकती है कि अकबर बादशाह जैसे लोग उससे मिलना चाहें।

अपनी सहेली ललिता के साथ मीरा गांव-गांव, शहर-शहर डोली। कृष्ण के गीत गाती वह कृष्ण भक्तों की खोज में वृन्दावन पहुंच गई। बिना बस, रेलगाड़ी, घोड़ागाड़ी के मीरा और ललिता चलती थीं सैकड़ों मील। रास्ते के गांव और कस्बों के लोगों की ज़रूर मदद रही होगी उन्हें। राणा मीरा के दुश्मन ज़रूर हो गये थे पर आम जनता मीरा को चाहती होगी, उसकी हिम्मत की प्रशंसक होगी। वृन्दावन में मीरा कृष्ण के मंदिर गई तो वहां के मुख्य पुजारी ने मीरा से मिलने से इन्कार कर दिया। कहा कि वे औरतों से नहीं मिलते। कृष्ण की सच्ची भक्त मीरा ने कहलवाया कि 'कृष्ण के होते एक और मर्द कहां से आ गया। मैंने तो सुना था कि कृष्ण के सब भक्त गोपियों या स्त्री समान होते हैं।' इस पर मीरा ने एक पद भी रचा।

'हूं तो जाणती हती के व्रजमां पुरूष छे एक
व्रजमां वसी के तमे पुरूष छो,
भलो तमारो विवेक'

कहते हैं यह सुनकर वे मदनि पंडित जी शर्माये और मीरा को मिलने चले आये। इस प्रकार मीरा ने स्त्री-विरोधी धर्म के ठेकेदारों को भी आड़े हाथों लिया। अपने निराले ढंग से मीरा ने जगह-जगह पितृसत्तात्मक सोच को ललकारा, उसका विरोध किया।

क्या कबीर, रहीम, गौतम के रास्तों पर इतने सामाजिक कांटे थे?

हर क़दम पर मीरा को पितृसत्ता का मुकाबला करना पड़ा। कबीर, रहीम या गौतम के सामने ऐसी रूकावटें नहीं थीं। उन्हें किसी ने ज़हर के प्याले नहीं भेजे, न किसी ने कुलनाशी कहा। उन्हें हर क़दम पर इतने इम्तहान (परीक्षायें) नहीं देने

(क्रमशः पृष्ठ 24 पर)

मीराबाई (पृष्ठ 6 का शेष भाग)

पड़े जितने औरत होने की वजह से मीरा ने दिए। गौतम जब सत्य या बोध की खोज में अपनी पत्नी, बेटे, मां-बाप, राज-पाट छोड़कर, बिना बताये निकल गये तो सबने शोक ज़रूर मनाया पर उसके पीछे फ़ौजें नहीं भेजीं, उसे मारने के षड़यंत्र नहीं रचे गये। इन सब पुरूषों को, जो ज्ञानी, ध्यानी, फ़कीर, कवि लेखक बन जाते हैं उन्हें मर्द होने के जो अनगितनत फ़ायदे मिलते हैं वो मीरा को नहीं मिले। इसीलिये कहते हैं कि औरतों को मर्दों की बराबरी करने के लिये उनसे दुगनी सहूलियतें चाहिए।

हालांकि मीरा की मृत्यु के बारे में कुछ पक्का नहीं है, पर एक मान्यता यह है कि आख़िरी दम तक मीरा के ससुराल वालों ने उसे चैन से जीने नहीं दिया। मीरा और ललिता समुद्र के किनारे बसे तीर्थ द्वारका में थीं। राणा ने पांच-सात ब्राह्मण भेजे मीरा को वापिस लिवा लाने को। मीरा के इन्कार करने पर ब्राह्मणों ने कहा कि अगर मीरा उनके साथ वापिस नहीं जायेगी तो वे अनशन कर देंगे और अपनी जान दे देंगे। इतना मानसिक दबाव मीरा सह न सकी। कहते हैं उन्हीं दिनों में मीरा और उसकी जीवन-मरण की साथी ललिता समुद्र में समा गई और हमेशा के लिये ससुराल वालों की पकड़ से दूर चली गईं। कहने को लोग कहते हैं कि मीरा को समुद्र में कृष्ण दिखाई दिये और वह उनकी तरफ़ चल दी और समुद्र में समा गई, पर यह भी मुमकिन है कि मीरा ससुराल के दबाव का और मुकाबला न कर सकीं, वह थक गई थीं विपत्तियों का सामना करते करते। उसे हर वक्त सामाजिक लहरों के विपरीत चलना पड़ा था। शायद अंत में मीरा जैसी औरत को भी पितृसत्तात्मक रीति-रिवाजों के बोझ ने मार डाला। मरकर मीरा अमर हो गई और हमें यह संदेश दे गई कि मुश्किल से मुश्किल हालातों में भी नये रास्ते बनाये जा सकते हैं, गहरे से गहरे अंधेरे में भी दीप जलाये जा सकते हैं। □